अवस्थानुकृतिर्नाट्यं रूपं दृश्यतयोच्यते ।
रूपकं तत्समारोपात् दशधैव रसाश्रयम् ॥

प्रस्तुत कारिका आचार्य धनञ्जय विरचित दशरूपक के प्रथम प्रकाश से उद्धृत है। प्रस्तुत कारिका में रूपक (नाटक) किसे कहते हैं यह बताया गया है।

अवस्था के अनुकरण को ही नाट्य कहते हैं। दृश्य होने के कारण वही नाट्यरूप भी कहा जाता है। आरोप किये जाने के कारण वह नाट्य रूप रूपक कहा जाता है और रसों पर आश्रित वह नाटक केवल दश ही प्रकार का होता है :—

अवस्थानुकृतिर्नाट्यम् :—

अवस्था के अनुकरण को नाट्य कहते हैं। काव्य (रूपकों) में निबद्ध या चित्रित धीरोदात्त, धीरोद्धत, धीरललित और धीरप्रशान्त प्रकृति के नायकों तथा उन-उन स्वभाव की नायिकाओं या वर्णित पात्रों का आङ्गिक, वाचिक, आहार्य तथा सात्त्विक इन चार प्रकार के अभिनयों द्वारा अवस्थानुकरण किया जाता है वह नाट्य कहलाता है। धनिक का भी यही मत है—

" काव्योपनिबद्धधीरोदात्ताद्यवस्थानुकारश्चतुर्विधाभिनयेन वाचिकाङ्गिकसात्त्विकाहार्यरूपेण तादात्म्यापत्तिर्नाट्यम् ।"

काव्य में निबद्ध धीरोदात्त नायिकादि की अवस्थाओं का अनुकरण चार प्रकार के अभिनय के द्वारा तादात्म्यापत्ति अर्थात् एकरूपता ही नाट्य है।

आचार्य भरत अवस्था को 'अवस्था सुखदुःखार्थसम्भवा'। अवस्थानुकरण से ग्रन्थकार का तात्पर्य यह है कि रूपकों में वर्णित अनुकार्य पात्रों की सुखदुःखात्मक

आदि समस्त अवस्थाओं का, उनकी क्रिया-कलापों का, वेश-भूषा का, बोलने का, भावों को व्यक्त करने की बोली का अनुकरण इस प्रकार किया जाय कि अनुकर्ता और वर्णित पात्रों में तादात्म्यापत्ति एकरूपता की ऐसी प्रतीति हो जाय कि उन दोनों (अनुकर्ता और अनुकार्य) में कोई भेद न दिखाई पड़े। यथा-नट दुष्यन्त की प्रत्येक प्रवृत्ति का ऐसे अनुकरण करें कि नट और दुष्यन्त में उसके शरीर संचालन, बोलने की शैली उसकी वेश-भूषा, एवं अवस्था के अनुसार उत्पन्न होने वाले भावों, विचारों में कोई अन्तर न दिखाई पड़े और सामाजिक को ऐसा अनुभव हो सके कि नट ही राजा दुष्यन्त है। तात्पर्यार्थ यही है कि रंगमंच पर दुष्यन्त और नट में भेद प्रतीति न हो उनमें परस्पर अभेद प्रतिपत्ति हो जाय। उसी को नाट्य कहते हैं।

रूपं दृश्यतयोच्यते:-

- दृश्य (चक्षुर्ग्राह्य) होने के कारण वही नाट्य रूप कहा जाता है। नायक चार प्रकार के होते हैं- धीरोदात्त, धीरोद्धत, धीरललित एवं धीरप्रशान्त। अभिनय भी चार प्रकार का होता है - आङ्गिक, वाचिक, आहार्य और सात्त्विक। इन चार प्रकार के अभिनय द्वारा दृश्य होने के कारण वही नाट्य रूप भी कहा जाता है।

नाट्य का रंगमंच पर नटों द्वारा अभिनय किया जाता है। दर्शक उस नाट्य को अभिनीत होते हुये आँखों से देखते हैं, अतः वह नाट्य दृश्य है। जिस प्रकार हम नीले-पीले लाल वर्ण को देखते हैं तथा हमारे आँखों से देखे जाने के विषय को रूप कहा जाता है, उसी प्रकार चक्षुर्ग्राह्य होने से

नाट्य रूप भी कहलाता है। धनिक का भी यही मत है — "तदेव नाट्यं दृश्यमानतया रूपमित्युच्यते नीलादि रूपवत्।"

शारदातनय ने भी स्पष्ट करते हुये कहा है कि नाटक में स्थित वाक्यार्थ पदार्थ का अभिनय रूप नट का कर्म ही नाट्य कहलाता है —

नाटकस्थित वाक्यार्थपदार्थाभिनयात्मकम्।
नटकर्मैव नाट्यं स्यादिति नाट्यविदां मतम्॥

रूपकं तत्समारोपात् :—

काव्य में वर्णित राम आदि की अवस्था का नट में आरोप किये जाने के कारण वह नाट्य रूप रूपक कहलाता है।

जैसे रूपक अलङ्कार में मुख पर चन्द्रमा का आरोप करने के कारण मुख चन्द्र कहा जाता है वैसे ही नाट्य में नट पर काव्य में वर्णित रामादि पात्रों की अवस्था का आरोप होने के कारण नाट्य भी रूपक के नाम से जाना जाता है — "नटे रामाद्यवस्थारोपेण वर्तमानत्वाद्रूपकं मुखचन्द्रादिवत्।" नाट्य रूप और रूपक के अर्थ को अधिक स्पष्ट करने के लिये वृत्तिकार कहते हैं —

'जिस प्रकार इन्द्र पुरन्दर और शक्र ये तीन शब्द एक ही देवता के वाचक हैं, फिर भी किसी विशेष कारण से उनमें भिन्नता है। अर्थात् विशेष निमित्त से किसी विशिष्ट अर्थ में उनका प्रयोग किया जाता है। एक ही देवता को ऐश्वर्यसम्पन्न होने के कारण इन्द्र शत्रुओं के पुरों का विदारण करने के कारण 'पुरन्दर' और समर्थ होने के कारण 'शक्र' कहा जाता है। उसी प्रकार एक ही अर्थ के वाचक नाट्य, रूप, तथा रूपक इन तीनों शब्दों में प्रवृत्ति-

निमित्तक भेद अवश्य है। यह भेद अलग-अलग कारणों से हुआ है। इसी प्रकार एक ही दृश्यकाव्य अवस्थाओं का अनुकरण होने के कारण नाट्य है। दृश्य होने के कारण रूप है, नट में राम आदि का आरोप होने के कारण रूपक है। वृत्तिकार के अनुसार —— " एकस्मिन्नर्थे प्रवर्तमानस्य शब्दत्रयस्य इन्द्रः पुरन्दरः शक्रः इतिवत् प्रवृत्तिनिमित्तभेदो दर्शितः।"

दशधैव रसाश्रयम् :-

रसों पर आश्रित वह नाट्य केवल दस ही तरह का होता है। यहाँ (दश धा + एव) दशधैव अर्थात् दस ही प्रकार के कहने का तात्पर्य यह है कि शुद्ध रूप से दश प्रकार का नाट्य होता है, जो रसाश्रित होता है, किन्तु इनके अतिरिक्त अन्य अभिनेय काव्यों में रस का सांकर्य होता है। इस तथ्य को बताने के लिये कारिका में 'एव' का प्रयोग अवधारण के लिये ही शब्द का प्रयोग किया गया है। यहाँ 'एव' शब्द शब्दार्थ की सीमा बाँधने के लिये निश्चयात्मकता को व्यक्त करने के लिये प्रयुक्त हुआ है।

धनञ्जय के अनुसार रसाश्रित रहने वाला रूपक ही शुद्ध रूपक है। यह दशप्रकार का मात्र होता है। नाटिका का परिगणन इन दश प्रकार के रूपकों में नहीं किया गया है क्योंकि नाटिका में नाटक और प्रकरण का सांकर्य होता है। वह शुद्ध रसाश्रित नहीं होती। उसमें रसों का सांकर्य होता है। वृत्तिकार धनिक का भी यही मत है — " रसानाश्रित्य वर्तमानं दशप्रकारकमेव, एवेत्यव धारणं तु शुद्धाभिप्रायेण। नाटिकायाः सङ्कीर्णत्वेन वक्ष्यमाणत्वात्"

वे इस प्रकार हैं ——

नाटकं सप्रकरणं भाणः प्रहसनं डिमः ।
व्यायोग समवकारौ वीथ्यङ्केहामृगा इति ॥

नाटक, प्रकरण, भाण, प्रहसन, डिम, व्यायोग, समवकार, वीथि, अङ्क और ईहामृग ।

आचार्य भरत ने जिस दश प्रकार के रूपकों का उल्लेख प्रत्यक्ष रूप में किया है वे परस्पर अत्यन्त भिन्न हैं। वे नाट्य रचना के मूल उत्स हैं। भरत द्वारा उल्लिखित रूपक के भेदों की इस गणना में उन रूपकों का समावेश नहीं किया गया है, जिनमें दो प्रकार के रूपकों के विशेष गुणों का सम्मिश्रण होता है। यथा- नाटिका, त्रोटक, सट्टक, रासक आदि। ये भेद आचार्य भरत को अभिमत हैं।

इस प्रकार नाट्यशास्त्रोक्त दशरूप विधान को देखने से ज्ञात होता है कि इस दशरूपक का भेदक तत्व वस्तु, नेता तथा रस ही है।